'मृदु शक्ति' के रूप में संस्कृतशिक्षा

आचार्य चान्दकिरण सलूजा
निदेशक
संस्कृत-संवर्धन-प्रतिष्ठान दिल्ली
chandkiran_saluja@yahoo.co.in

शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा ॥ (ऋग्वेदः;१०.१३)
(विश्व में व्याप्त हे अमृत्व-भाव की सन्तान! सुनो .....)
'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'
(अर्थात् 'इस विश्व को आर्य-भाव की मानव-स्थली बनाओ।')

'शिक्षा जीवन जीने और वर्तमान जीवन तथा जीवन के पश्चात् के समय को समझने की तैयारी है ..... शिक्षा राजनैतिक एवं सामाजिक आवश्यकता है ..... विजय प्राप्ति, शांति का संरक्षण, उन्नत्ति की प्राप्ति, सभ्यता का निर्माण और इतिहास की रचना युद्धभूमि में नहीं वरन् शैक्षिक संस्थानों, संस्कृति के उपजाऊ स्थलों में ही की जा सकती है। अतः शिक्षा को प्रज्ञा प्रदायी के रूप में स्वीकार किया जाता है।'

(उच्चतमन्यायालय, उन्नीकृष्णन् बनाम आन्ध्रप्रदेश राज्य, १९९४)

"Since wars begin in the minds of men, it is in the minds of men that the defences of peace must be constructed ..... the wide diffusion of culture and the education of humanity for justice and liberty and peace are indispensable to the dignity of man and constitute a sacred duty which all the Nations must fulfill in a spirit of mutual assistance and concern."

और यह स्पष्ट है कि,

संस्कृत-वाङ्मय इस मानसिक शान्ति की शिक्षा के सूत्रों का एक श्रेष्ठ दर्पण है। वैश्विक स्तर पर योग की स्वीकृति मूलतः वैश्विकस्तर पर 'संस्कृत में समाई शान्ति की कुञ्जी' का ज्वलन्त प्रमाण है। (UNO Statement)

अत्यन्त सामान्य रूप में 'मृदु शक्ति' से अभिप्राय है वैश्विक स्तर पर विभिन्न राष्ट्रों के बीच राजनयिक सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में परस्पर द्वन्द्वों अथवा संघर्षों को युद्धों, शस्त्रों आदि के हिंसात्मक उपायों आदि के स्थान पर परस्पर बातचीत, सांस्कृतिक गतिविधियों, आदान-प्रदान, सन्धियों, सम्बन्धों आदि के माध्यम से सुलझाना। इस सब का प्रमुख उद्देश्य है वैश्विक स्तर पर एकत्व, परस्पर प्रेम, विश्वास अथवा

सौहार्द की भावना आदि का विकास करना ताकि हिंसात्मक प्रवृत्तियों अथवा गतिविधियों आदि से प्राणियों की सुरक्षा करते हुए 'सतत विकास' के कार्यक्रम को महत्त्व देना। इस दृष्टि से वैश्विक स्तर पर विभिन्न प्रकार के शान्ति समझौते अथवा सम्मेलन, मानवीय अधिकारों के संरक्षण आदि से सम्बद्ध उद्घोषणाओं, समिति आदि का गठन, अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा आयोगों की स्थापना, संगठनों आदि का निरन्तर आयोजन आदि विभिन्न उपाय इसी तथ्य के महत्त्व को ही प्रकाशित करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर २१ जून की योग-दिवस के रूप में मनाने की स्वीकृति इसी तथ्य को ही प्रमाणित करती है –

> The United Nations General Assembly proposed on December 11 and established **June 21** as "**International Yoga Day**." The date was assigned for the occasion as it is the longest **day** when the sun is out at its most compared to every other **day** of the year.

भारतीय परम्परा में इस प्रकार के अनेकों उदाहरण प्राप्त होते हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा जिसकी औपचारिक रूप से चर्चा हारवर्ड विश्वविद्यालय के जोसेफ निये द्वारा सन् १९९० में अंतरराष्ट्रीय संबन्धों के सन्दर्भ में 'सॉफ्ट पॉवर' से सम्बद्ध लिखित एक पुस्तक (Bound To Lead: The Changing Nature of American Power) के अनुसार परस्पर सहयोग अथवा किसी अन्य प्रकार के आकर्षण के द्वारा वांछित परिणाम प्राप्त करने की क्षमता 'मृदु शक्ति' कहलाती है। इसके विपरीत सैन्य बल अथवा धन आदि के द्वारा इष्ट परिणाम प्राप्त करने की प्रक्रिया 'कठोर शक्ति' कहलाती है। में किया। उन्होंने इसी संक्ल्पना को अपनी अन्य पुस्तक 'Soft Power: The Means To Succession World Politics' और विकसित किया था। जोसेफ निये के अनुसार –

> 'a state can make its power seem legitimate in the eyes of others, it will encounter less resistance to its wishes. If its culture and ideology are attractive, others will more willingly follow. If it can establish international norms consistent with its society, it is less likely to have to change. If it can support institutions that make other states wish to channel or limit their activities in ways the dominant state prefers, it may be spared the costly exercise of coercive or hard power.... The major characteristics of soft power include, "culture (when it is pleasing to others), values (when they are attractive and consistently practiced), and policies (when they are seen as inclusive and legitimate)'

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के सन्दर्भ में इस शब्द का प्रयोग बहुतायत से प्रयोग होता है। इस दृष्टि से प्रायः निम्नलिखित क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया है –

चलचित्र, चित्रकला, चिकित्सा, धर्म, नृत्य, पंचशील, भारतीय विद्या, भारतीय दर्शन, भारतीय सिनेमा, महात्मा गांधी, मूर्ति कला, योग, परस्पर सहयोग, साहित्य, संस्कृति, कला, योग, परस्पर सहयोग, साहित्य, संस्कृति, संगीत, भाषा, वास्तुकला इत्यादि।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् वैश्विक शान्ति, सुरक्षा एवं समृद्धि हेतु स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय संस्था संयुक्त राष्ट्र संघ की पृष्ठ भूमि में 'मानवीय जीवन की गरिमा' को ध्यान में रखते हुए विश्व में शांति बनाए रखने के साथ-साथ मानव-हित हेतु सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास की प्रस्थापना करना रहा है। वैश्विक शान्ति हेतु दृढ़ संकल्पित संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्यों का अत्यन्त स्पष्ट सोचना था कि –

युद्ध की जिन विभीषिकाओं ने मानव जाति को दो बार संकटग्रस्त किया है, आने वाली पीढ़ियों की उन विषम परिस्थितियों से केवल रक्षा ही न की जाए अपितु रक्षा करने के साथ-साथ .....

- उनके मूलभूत मानवाधिकारों,
- प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिष्ठा एवं महत्त्व,
- पुरुषों एवं स्त्रियों, छोटे एवं बड़े राष्ट्रों के समान अधिकारों के प्रति आस्था की पुष्टि,
- संधियों और अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रति न्याय और आदर की भावना बनाए रखने वाली परिस्थितियों के निर्माण,
- व्यापक स्वतंत्रता के लिए सामाजिक प्रगति,
- बेहतर जीवन स्तर को प्रोत्साहन तथा इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए
- सहिष्णुता के आदर्शों को अपनाया जाना चाहिए।

यह स्वीकार किया गया था कि संयुक्त राष्ट्र संघ के सभी सदस्य –

- आदर्श पड़ोसियों की भाँति शांतिपूर्वक मिलजुल कर रहते हुए अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा हेतु ही अपनी शक्तियों को संगठित करेंगे। साथ ही,
- यह भी सुनिश्चित किया गया था कि सामान्य हितों की रक्षा के अतिरिक्त अन्य किसी कार्य के लिए सशस्त्र शक्ति का उपयोग नहीं किया जाएगा
- अन्तर्राष्ट्रीय तंत्र का उपयोग सभी लोगों की आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति के प्रोत्साहन के लिए किया जाएगा।

इन उद्देश्यों की प्राप्तिके लिए मिलजुल कर प्रयास करने का संकल्प लिया गया था। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया का प्रमुख प्रयोजन सम्पूर्ण विश्व में शान्ति एवं विकास के विभिन्न उपायों को सुदृढ़ करना था।
इस दृष्टि से इसके निम्नलिखित प्रयोजन निर्धारित किए गए थे –

- अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा बनाए रखने के उद्देश्य से वे प्रभावी और सामूहिक रूप से कदम उठाना जिन बातों से शान्ति भंग होने का भय न हो।
- शान्ति भंग करने वाले आक्रामक कार्यों अथवा तत्त्वों को समाप्त करना।
- न्याय और अन्तर्राष्ट्रीय विधि के आधार पर शान्तिपूर्ण साधनों से उन अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों या संकटपूर्ण स्थितियों को सुलझाना या तय करना जिनके कारण शान्ति भंग होने की आशंका हो।
- समान अधिकार और आत्मनिर्णय के सिद्धान्त हेतु आदर की भावना के आधार पर विभिन्न राष्ट्रों के बीच मित्रतापूर्ण भावना को बढ़ावा देना।
- आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक या मानव कल्याण सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना।
- मानवाधिकारों के साथ-साथ किसी प्रकार के जाति, लिंग भाषा या धर्म पर आधारित किसी भी भेदभाव के बिना सबकी मौलिक स्वतन्त्रता के लिए आदर की भावना को प्रोत्साहन देना।

इन प्रयोजनों की पूर्ति हेतु निम्नलिखित सिद्धान्तों को आधार के रूप में स्वीकार किया गया था –

- सभी सदस्यों की समान प्रभुसत्ता की स्वीकृति
- दायित्वों का ईमानदारी के साथ अनुपालन
- अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को शान्तिपूर्ण साधनों से इस प्रकार तय करना ताकि विश्व की सुरक्षा, शान्ति और न्याय को किसी प्रकार का भय न रहे
- किसी भी राज्य की क्षेत्रीय अखण्डता, राजनीतिक स्वाधीनता के विरुद्ध धमकी अथवा बल का प्रयोग न करना और
- न ही संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्यों के प्रतिकूल कोई कार्य करना
- निरस्त्रीकरण तथा शस्त्रनियन्त्रण का नियमन
- राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी क्षेत्रों में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की वृद्धि
- अन्तर्राष्ट्रीय विधि के क्रमिक विकास और उसके संहिताकरण हेतु प्रोत्साहन

- जाति, लिंग, भाषा या धर्म पर आधारित किसी भी भेदभाव के बिना सबके लिए मानवाधिकारों और मौलिक स्वतन्त्रताओं की प्राप्ति हेतु सहयोग देना

संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र का अध्याय छः मूलतः विवादों के शान्तिपूर्ण निपटारे की प्रक्रिया से सम्बद्ध है। इसके अनुच्छेद 33 के अनुसार किसी ऐसे विवाद से, जिसके बने रहने से विश्व की शान्ति और सुरक्षा हेतु भय उत्पन्न होने की सम्भावना हो, तो सभी सम्बन्धित पक्ष उस विवाद को सबसे पहले बातचीत, पूछताछ, मध्यस्थता, समझौता, विवाचन, न्यायिक समझौते या क्षेत्रीय अभिकरणों या व्यवस्थाओं या अपनी पसन्द के अन्य शान्तिपूर्ण साधनों के माध्यम से समाधान का प्रयास करेंगे।
सार रूप में संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रमुख उद्देश्यों को निम्नलिखित रूप में देखा जा सकता है –

- विश्व में सुरक्षा, शान्ति और न्याय के संरक्षण हेतु युद्ध रोकना
- मानव अधिकारों का संरक्षण करना
- अंतर्राष्ट्रीय विधि को व्यावाहरिक रूप देना
- सामाजिक और आर्थिक विकास के प्रयास करना
- व्यक्ति के जीवन-स्तर को सुधारना एवं
- रोगों की रोकथाम करना

इस संगठन ने विश्व में विभिन्न अवसरों पर सुरक्षा-परिषद्, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद्, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय, संयुक्त राष्ट्रीय शैक्षणिक, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संगठन, विश्व स्वास्थ्य संगठन आदि विभिन्न परिषदों अथवा संगठनों के माध्यम से मानव की सेवा के अनेक आदर्श प्रस्तुत किए हैं। मूल रूप से यह सम्पूर्ण परिप्रेक्ष्य मानवीय मूल्यों की प्रस्थापना से सम्बद्ध है। इन मूल्यों के प्रति सजगता उत्पन्न करना शिक्षा का एक प्रमुख लक्ष्य रहता है। स्वतन्त्रता के पश्चत् भारतीय शिक्षा के इतिहास में सन् १९९० में आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में १९८६ की राष्ट्रीय शिक्षा-नीति की समीक्षा समिति से सम्बद्ध एक प्रमुख प्रतिवेदन का रखा गया नाम 'सजग एवं मानवीय समाज की ओर' (Towards Humane and Enlighten Society) इसी तथ्य की ओर संकेत देता है कि शिक्षा का एक प्रमुख प्रकार्य मनुष्य को मानवीय मूल्यों के प्रति सजग बनाना है। स्वतन्त्रता के पश्चात् की हमारी विदेश-नीति के आधारभूत सिद्धान्तों में समन्वय एवं पारस्परिक आश्रितता एवं इस पर आधारित शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व का सिद्धान्त एक अत्यधिक प्रमुख सिद्धान्त रहा है। सन् १९५० में स्थापित 'भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद्' की स्थापना को भी इसी परिप्रेक्ष्य में देखा व समझा जा सकता है। इसकी स्थापना विश्व में अन्य देशों के साथ परस्पर सम्बन्धों की प्रगाढ़ता की दृष्टि से आपसी समझ तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान के लक्ष्य की पूर्ति हेतु की गई थी –

> Its objectives are to actively participate in the formulation and implementation of policies and programmes pertaining to India's external cultural relations; to foster and strengthen cultural relations and mutual understanding between India and other countries; to promote cultural exchanges with other countries and people, and to develop relations with nations.

अपने विभिन्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत विभिन्न परिचर्चाओं के माध्यम से भारत को एक मृदु शक्ति के रूप में विकसित व प्रस्तुत करना भी परिषद् का एक प्रमुख लक्ष्य रहा है –

> In order to promote India's Soft power and enhance India's skills of cultural diplomacy and reinforce the dialogues between the civilizations, Council organizes International conferences on subjects like Indology, Buddhism, Sufism, Tagore and other subjects related to Indian culture, philosophy and society.....
>
> These Conferences eventually help the Council to accomplish ..... India's great cultural and educational efflorescence. To sustain and share this idea to promote India's rich heritage, these Conferences prove very useful and interactive, with bringing eminent Indians scholars & other International scholars at the same platforms.

इस मृदु शक्ति के सामान्यतः पांच आधारभूत स्तम्भ माने जाते हैं –

- सम्मान (dignity)
- संवाद (dialogue)
- समृद्धि (shared prosperity)
- सुरक्षा (regional and global security) and
- संस्कृति एवं सभ्यता (Cultural and civilizational links).

सम्पूर्ण शान्ति एवं सुरक्षात्मक भौगोलिक-राजनैतिक परिवेश हेतु ये सभी तत्त्व बुनियादी तौर पर परस्पर अन्तःसम्बद्ध हैं। विश्व में शान्ति, भ्रातृत्व-भाव, अन्तःराष्ट्रीय सहयोग, सह-अस्तित्व, समृद्धि एवं स्थिरता के सन्देश को प्रसारित करना ही इसका प्रमुख लक्ष्य है। इस पृष्ठभूमि में विभिन्न संस्कृतियों, सभ्यताओं,

लोगों आदि की जीवन-शैली, संस्कृति तथा मूल्यों को महत्त्व देते हुए परस्पर संवाद हेतु परिवेश-निर्माण का लक्ष्य ही निहित है।

सुचिन्तित है कि वैश्विक शान्ति एवं सुरक्षा के सन्दर्भ में मृदु शक्ति के रूप में सांस्कृतिक कूटनीति का विशेष व महत्त्वपूर्ण स्थान रहता है, और भारतीय सन्दर्भों में संस्कृत का इस दृष्टि से विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान है। कारण भी सुविदित है कि –

भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतिश्च संस्कृतञ्च

अर्थात् 'संस्कृत और संस्कृति' ये दोनों ही भारत की प्रतिष्ठा के आधारभूत तत्त्व हैं। शिक्षा और संस्कृति के परस्पर सम्बन्ध को स्पष्ट करती हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (१९८६) का प्रारम्भ ही इस कथन से होता है कि –

> 'मानव इतिहास के आदिकाल से शिक्षा का विविध भांति विकास एवं प्रसार होता रहा है। प्रत्येक देश अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक अस्मिता को अभिव्यक्ति देने, पनपाने और साथ ही समय की चुनौतियों का सामना करने के लिए अपनी विशिष्ट शिक्षा-प्रणाली विकसित करता है……"

इसमें निहित भाव को विस्तार देते हुए चिन्तकों का स्पष्ट मानना है कि –

> 'कोई राष्ट्र जब अपनी सांस्कृतिक जड़ों से उन्मूलित होने लगता है, तो भले ही ऊपर से बहुत सशक्त और स्वस्थ दिखाई दे ….. भीतर से मुरझाने लगता है। स्वतंत्रता के बाद भारत के सामने यह सब से दुर्गम चुनौती थी…. पांच हज़ार वर्ष पुरानी परम्परा से क्या ऐसे 'राष्ट्र' का जन्म हो सकता है जो अपने में 'एक' होता हुआ भी उन 'अनेक' स्रोतों से अपनी संजीवनी खींच सके, जिसने भारतीय सभ्यता का रूप-गठन किया था। यह एक ऐसी अद्भुत 'सिम्फनी' रचने की परिकल्पना थी, जिसके संगीत में हर छोटे-से-छोटे वाद्य का सुर संयोजित होकर गूंजता था।'

भार्त के मानवीय सन्देश की चर्चा करते हुए माइकल डैनिनो भारतीय संस्कृति एवं इसके भविष्य से सम्बद्ध अपनी एक पुस्तक में 'फ्रेंच इण्डोलोजिस्ट' (प्राच्यवादी) 'सेल्विन लेवी' के कथन को उद्धृत करते हुए विश्व के प्रति भारत के उपहार रूप में दिए गए योगदान में संस्कृत के विशिष्ट स्थान की ओर संकेत देते हैं –

> `From Persia to the Chinese Sea, from icy regions of Siberia to the Islands of Java and Borneo, from Oceania to Socotra, India has propagated her beliefs, her tales and her civilization. She has left indelible imprints on one-fourth of the human tace in the course of a long succession of centuries. She has the right to reclaim in universal history the rank that ignorance has refused her for a long time and to hold her place amongst the great nations summarizing and symbolizing the spirit of Humanity.'

(Sylvain Levi, quoted in Discovery of India, p210, JLN Memorial Fund, New Delhi, 1981)

उच्चतम न्यायालय का अत्यन्त स्पष्ट कथन है कि –

> "जहां तक हम भारतवासियों का सम्बन्ध है हमने तो अपने प्राचीन देश की विरासत को सदा ही सम्मान दिया है। अपने विचारों की प्रस्तुति करते हुए हमें यह कहना है कि हमारी संस्कृति का स्रोत सूख जाएगा यदि हमने संस्कृत के अध्ययन को निरुत्साहित किया.....संस्कृत के अध्ययन के बिना भारतीय दर्शन को जिस पर हमारी संस्कृति और विरासत आधारित है, स्पष्ट रूप से समझना सम्भव नहीं है।" (उच्चतम न्यायालय, न्यायाधीश कुलदीप सिंह ; बी.एल.हंसारिया)

यही काराण है कि वैश्विक स्तर पर ही मानव्य मूल्यों से परिपूर्ण संस्कृत को एक 'मृदु शक्ति' (Soft Power) के रूप में देखा जा रहा है। वैश्विक शान्ति एवं सामञ्जस्य के साथ मिलकर रहने के उद्देश्य की पूर्ति की दृष्टि से संस्कृत साहित्य में अभिनिहित मानवीय मूल्यों का अपना विशिष्ट स्थान माना जा सकता है। इसकी शैली मुख्य रूप से 'वाद-प्रतिवाद' के स्थान पर `संवाद' पर आश्रित रही है।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा उद्घोषित मानवाधिकार सम्बन्धी घोषणा पत्र में विभिन्न अधिकारों की चर्चा करते हुए यह भी स्पष्ट किया गया कि संस्कृति गरिमापूर्ण जीवा का एक प्रमुख आधार है –

> प्रत्येक व्यक्ति को, समाज के सदस्य के रूप में, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है और राष्ट्रीय प्रयास तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के माध्यम से एवं प्रत्येक राज्य के गठन और संसाधनों के अनुसार ऐसे आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार को प्राप्त करने के अधिकारी हैं जो उसकी गरिमा और उसके व्यक्तित्व के उन्मुक्त विकास के लिए अनिवार्य हैं। **(अनुच्छेद, २२)**

विभिन्न अधिकारों के वर्णन से जो मुख्य समान तत्त्व सार के रूप में उभर कर आता है वह गौरवपूर्ण जीवन जीने का तत्त्व है। यह अत्यन्त स्पष्ट है कि वैदिक घोषणा कि 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' (अर्थात् इस सम्पूर्ण विश्व को आर्यभाव की मानवस्थली बनाएँ) में मूलतः यही तत्त्व समाहित है। आर्य भाव से अभिप्राय है –

इस प्रकार के अनेकों भावों को समेटने वाले अपार संस्कृत साहित्य को 'मानवीय कल्याण एवं गरिमा' के रूप में ही निहारा गया है –

संस्कृतवाङ्मयं नाम मानवकल्याणार्थं सृष्टम् अपारं ज्ञानभण्डारम्' ।

'सर्वे भवन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः' (अर्थात् सभी सुखी व नीरोगी हों) में यही कामना की गई है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' (अर्थात् सम्पूर्ण पृथ्वी एक परिवार है।) में इसी सार्वभौमिक पारिवारिक स्नेह व कुशलता की इच्छा प्रकट की गई है। प्रत्येक व्यक्ति परम सत्ता का अंश है –

"ज्योतिरमृतं मर्त्येषु" (ऋग्वेद, ६९.४)

(वह अमृत ज्योति सब प्राणियों में विद्यमान है।)

इसी प्रकार –

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरऽजायमानो बहुधा विजायते। (यजुर्वेद, ३१.१९)

अर्थात् अजन्मा प्रजा का रक्षक, जीवात्मा के हृदय में विचरण करते हुए विभिन्न प्रकार से प्रकट होता है। धैर्यशाली एवं बुद्धिमान् व्यक्ति उस परमात्मा को सभी प्रकारों से देखते हैं। सभी लोकान्तर उसी में ही स्थित हैं। अतः प्रत्येक व्यक्ति विभिन्न प्रकार की शक्तियों से परिपूर्ण है। आचार्य चाणक्य का अत्यन्त स्पष्ट कथन है कि कोई भी व्यक्ति 'अयोग्य' नहीं है –

'अयोग्यो पुरुषो नास्ति'।

मानवता के पाठ का वाचक संस्कृत-साहित्य मूलरूप से वैश्विक स्तर पर मानवीय एकीकरण, भ्रातृत्व एवं मित्र भाव से ही अनुस्यूत है –

"यत्र विश्वं भवति एकनीडम्"

अर्थात् जहाँ सम्पूर्ण विश्व एक घर के समान है। इसके साहित्य में समता, न्याय, पारदर्शिता, निष्पक्षता, सहानुभूति एवं संवेदनशीलता, शान्ति, विभेदता का सम्मान एवं सक्रिय प्रजातान्त्रिक नागरिकता के भाव दृष्टिगत होते हैं। संस्कृत के इन भावों की विदेश-नीति के अंग में रूप में स्वीकृति वैश्विक शान्ति की वाहक हो सकती है।

वैश्विक स्तर पर राष्ट्रीय हित एवं विभिन्न राष्ट्रों के बीच परस्पर सम्बन्धों की व्यावहारिकता को ध्यान में रखते हुए राजनयिक सांस्कृतिक सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में अन्तर्राष्ट्रीय कूट नीति के अंग के रूप में संस्कृत साहित्य में निहित श्रीमद्भगवद्गीता आधारित 'स्थित-प्रज्ञता' से सम्बद्ध सिद्धान्त अथवा मानवीय मूल्यों से सम्बद्ध भाव मानवीय गरिमा एवं कल्याण हेतु एक सशक्त आधारभूत संसाधक की भूमिका का निर्वहण कर सकते हैं।

इसी प्रकार साहित्य, कला, संगीत, शिक्षा, शिक्षण, राजनीति, धर्म, नीति, विज्ञान, अर्थशास्त्र, गणित, भूगोल, कृषि, वास्तु, भाषा, शारीरिक एवं मानसिक चिकित्सा, आहार, संस्कृति आदि ज्ञान की विभिन्न शाखाओं से सम्बद्ध संस्कृत-शास्त्रों में समाहित ज्ञान के सिद्धान्तों का वैश्विक स्तर पर आदान-प्रदान करके वैश्विक शान्ति की संस्कृति, समृद्धि, शिक्षा, पर्यावरण एवं विकास हेतु सार्वभौमिक ज्ञान के भंडार को समृद्ध किया जा सकता है। संकेत दिया जा चुका है कि सन् १९४५ में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनाई गई उद्देशिका का अत्यन्त स्पष्ट अभिमत है कि शान्ति के प्रयासों के अन्तर्गत मनुष्य के मस्तिष्क को शान्त करना अनिवार्य है। कारण भी स्पष्ट है कि युद्धों की योजना का विचार मूल रूप से मस्तिष्क में ही उपजता है और इस दृष्टि से साहित्य, संगीत, गीत, नृत्य, शिल्प, कला, संस्कृति आदि सांस्कृतिक तत्त्वों का विशिष्ट स्थान हो सकता है। साथ ही, समता, न्याय, स्वतन्त्रता, बन्धुता के परिप्रेक्ष्य

में मानवीय गरिमा से सम्बद्ध विचारों से युक्त शिक्षा की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो सकती है। शान्ति एवं सह-अस्तित्व हेतु प्रत्येक व्यक्ति का जीवन गरिमा युक्त होना अनिवार्य है –

> "Since wars begin in the minds of men, it is in the minds of men that the defences of peace must be constructed ..... That the wide diffusion of culture and the education of humanity for justice and liberty and peace are indispensable to the dignity of man and constitute a sacred duty which all the Nations must fulfill in a spirit of mutual assistance and concern."

मस्तिष्क की शान्ति के प्रशिक्षण के सन्दर्भ में, वैश्विक स्तर पर २१ जून के दिवस को पर 'योग-दिवस' के रूप में स्वीकार करना इसका सशक्त प्रमाण है। मानसिक स्थिरता एवं चिकित्सा के सन्दर्भ में योग की क्रियाओं एवं गतिविधियों का विशिष्ट स्थान एवं महत्त्व है। इसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यत देते हुए स्वीकार किया गया था कि –

यूनेस्को की दृष्टि में वैश्विक स्तर पर शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व हेतु शिक्षा, संस्कृति, विज्ञान एवं सूचनाओं की विशिष्ट भूमिका का निर्वाह करती है। सन् १९९६ में यूनेस्को द्वारा वैश्विक स्तर पर गठित शिक्षा आयोग के प्रतिवेदन में उल्लिखित शिक्षा के चार आधारभूत स्तम्भों के आधार को संस्कृत साहित्य में उपलब्ध भावों के परिप्रेक्ष्य में समझा जा सकता है –

- Learning to KNOW
  (न हि ज्ञान सदृशं पवित्रमिह वर्तते अथवा ज्ञानं मनुजस्य तृतीयं नेत्रम्)
  अर्थात् इस विश्व में ज्ञान के समान और कुछ भी पवित्र नहीं है। इसी प्रकार यह भी माना गया है कि ज्ञान ही मनुष्य का तृतीय नेत्र है।
- Learning to DO
  (ज्ञानं भारः क्रियां विना अथवा कर्मण्येवाधिकारस्ते)
  अर्थात् क्रिया अथवा व्यवहार के बिना ज्ञान भार के समान है। एवमेव श्रीमद्भगवद्गीता का यह सन्देश अत्यन्त प्रसिद्ध है कि कर्म करना ही मेरा दायित्व है।
- Learning to LIVE TOGETHER
  (सङ्गच्छध्वं संवदध्वम्)
  अर्थात् मिल कर चलो, मिलकर बोलो।
- Learning to BE
  (मनुर्भव अर्थात् मनुष्य बनो।)

यह अत्यन्त स्पष्ट है कि हमारे संविधान का आधारभूत दर्शन एवं सिद्धान्त मूल रूप से यूनेस्को के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों पर ही आधारित हैं। यूनेस्को के स्थापना काल से ही इसकी प्रमुखताओं एवं इसके उद्देश्यों के निर्धारण में हमारी एक विशिष्ट भूमिका रही है। मानवीय एकता ही इसके सिद्धान्तों का आधार है जो मूल रूप से 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सिद्धान्त को ही अभिव्यक्त करता है।

दर्शन की विभिन्न धाराओं वाली भारतीय परम्परा में विभिन्न विचारधाराओं में परस्पर समन्वय का आधार 'संवाद' ही रहा है। ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया में प्रमाण के रूप में शब्द को विशिष्ट स्थान दिया गया है। स्पष्ट ही है कि शब्द ही मूल रूप से संवाद का आधार है। परस्पर विवादों के समाधान के रूप में संस्कृत शास्त्रों की शास्त्रीय पद्धति के रूप में वाद-प्रतिवाद में समन्वय स्थापित करने की पद्धति उच्चस्तरीय मान्य सैद्धान्तिक ही नहीं व्यावहारिक पद्धति भी रही है।

विभिन्न संस्कृतियों, समूहों, भाषाओं, वेशभूषाओं, प्राकृतिक संरचना, दर्शन, साहित्य आदि विविधताओं से परिपूर्ण तथा विश्व के सबसे विशाल प्रजातान्त्रिक राष्ट्र के रूप में हमारा राष्ट्र भ्रातृत्व-भाव से परिपूर्ण संस्कृत साहित्य के 'सभी का कल्याण हो' जैसे समन्वयात्मक एवं कल्याणकारी भावों के आधार पर विश्व की विभिन्न विचारधाराओं, संस्कृतियों एवं सभ्यताओं में परस्पर समन्वय अथवा सामञ्जस्य के सूत्रों को परस्पर 'संवाद' के आधार पर समन्वित कर सकता है। निम्नलिखित श्लोक में निहित भावों को संवाद हेतु आवश्यक तत्त्वों के रूप में इसके आधार के रूप में समझा जा सकता है –

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं, शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधः , दशकं धर्मलक्षणम्॥

अर्थात् धैर्य, क्षमा, मन को नियन्त्रित रखना, चौर्य आदि कर्म से दूर रहना, मानसिक पवित्रता, इन्द्रियों पर नियन्त्रण, बौद्धिकता, ज्ञान प्राप्ति, सत्य तथा क्रोध से दूर रहना आदि। यह अत्यन्त स्पष्ट है कि मानवीय अथवा नैतिक मूल्यों के रूप में धर्म के इन लक्षणों को मान्यता देना बुनियादी तौर पर एक सहनशील एवं समावेशी समाज की रचना की बुनियाद रखने का ही प्रयास है। ये तत्त्व ही मृदु शक्ति के आधारभूत तत्त्व हैं। हमारी राष्ट्रीय शिक्षा नीति (२०२०) अपने दृष्टिकोण में इन्हीं भावों को शिक्षा के लक्ष्य के रूप में अभिव्यक्त करती है –

> "शैक्षिक प्रणाली का उद्देश्य ऐसे अच्छे इंसानों का विकास करना है जो तर्कसंगत विचार और कार्य करने में सक्षम हों, जिनमें करुणा और सहानुभूति, साहस और लचीलापन, वैज्ञानिक चिंतन और रचनात्मक कल्पनाशक्ति, नैतिक मूल्य और आधार हों । इसका उद्देश्य ऐसे रचनाशील लोगों को तैयार करना है जो भारतीय संविधान द्वारा परिकल्पित 'समावेशी और बहुलतावादी' समाज के निर्माण में उत्कृष्ट पद्धति से योगदान कर सकें। ..... नीति में परिकल्पित है कि हमारे संस्थानों की पाठ्यचर्या और शिक्षाविधि छात्रों में अपने मौलिक दायित्वों और संवैधानिक मूल्यों, देश के साथ जुड़ाव और बदलते विश्व में नागरिक की भूमिका और उत्तरदायित्वों की जागरूकता उत्पन्न करे ।

नीति का दृष्टिकोण छात्रों में भारतीय होने का गर्व न केवल विचार में अपितु व्यवहार, बुद्धि और कार्यों में भी और साथ ही ज्ञान, कौशल, मूल्यों और सोच में भी होना चाहिए जो मानवाधिकारों, स्थायी विकास और जीवनयापन तथा वैश्विक कल्याण के लिए प्रतिबद्ध हो, ताकि वे सही मायने में वैश्विक नागरिक बन सकें .... यह नीति प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के आलोक में तैयार की गयी है।"

इस सम्पूर्ण परिप्रेक्ष्य की सम्पूर्त्ति हमारी यह राष्ट्रीय शिक्षा-नीति (२०२०) संस्कृत-शिक्षा के माध्यम से करने की चर्चा करते हुए मानती है कि –

'यह नीति प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के आलोक में तैयार की गयी है। ..... संस्कृत, संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्णित एक महत्त्वपूर्ण आधुनिक भाषा होते हुए भी, इसका शास्त्रीय साहित्य .... विशाल है ..... संस्कृत साहित्य में गणित, दर्शन, व्याकरण, संगीत, राजनीति, चिकित्सा, वास्तुकला, धातु विज्ञान, नाटक, कविता, कहानी, और बहुत कुछ (जिन्हें "संस्कृत ज्ञान प्रणालियों" के रूप में जाना जाता है), की विशाल राशि है ... संस्कृत को, त्रि-भाषा के मुख्यधारा विकल्प के साथ, विद्यालय और उच्चतर शिक्षा के सभी स्तरों पर छात्रों के लिए एक महत्त्वपूर्ण, समृद्ध विकल्प के रूप में पेश किया जाएगा। यह उन पद्धतियों से पढ़ाया जाएगा जो दिलचस्प और अनुभवात्मक होने के साथ-साथ समकालीन रूप से प्रासंगिक हैं, जिसमें संस्कृत ज्ञान प्रणाली का उपयोग सम्मिलित है,....। **(राष्ट्रीय शिक्षा नीति, २०२०; ४.१७)**

इस दृष्टि से शिक्षा व्यवस्था में संस्कृत-शिक्षा का एक विशिष्ट स्थान कल्पित किया गया है।

मूल रूप से संस्कृत-वाङ्मय पर आश्रित भारत की मृदु-शक्ति के रूप में भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता अपने बहु-आयामी व सहिष्णु स्वरूप के कारण विश्व की सभी संस्कृतियों को केवल आश्रय ही नहीं देती रही अपितु उनके प्रचार-प्रसार को स्थान व दिशा भी देती रही है। इसके आवश्यक तत्त्वों का उल्लेख करने के साथ ही शिक्षा-व्यवस्था में इसे आवश्यक स्थान देने की चर्चा करते हुए शिक्षा नीति (२०२०) का मानना है कि –

'नैतिक बोध के चलते पारंपरिक भारतीय मूल्यों और सभी आधारभूत मानवीय और संवैधानिक मूल्यों, जैसे सेवा, अहिंसा, स्वच्छता, सत्य, निष्काम-कर्म, शांति, त्याग, सहिष्णुता, विविधता, बहुलवाद, नैतिक-आचरण, लैंगिक संवेदनशीलता, ज्येष्ठों के लिए सम्मान, सभी लोगों और उनकी अंतर्निहित क्षमताओं का सम्मान, पर्यावरण के प्रति सम्मान, सहायता करना, शिष्टाचार, धैर्य, क्षमा, समानुभूति, करुणा, देशभक्ति, लोकतांत्रिक दृष्टिकोण, अखंडता, उत्तरदायित्व, न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व) को विद्यार्थियों में विकसित किया जा सकेगा। बच्चों को पंचतंत्र की मूल कहानियों, जातक, हितोपदेश, और अन्य रुचिकर दंतकथाओं और भारतीय

परंपरा से प्रेरक कहानियों को पढ़ने और सीखने का अवसर मिलेगा और वैश्विक साहित्य पर उनके प्रभावों के बारे में भी वे जानेंगे।'

महर्षि अरविन्द एवं कवि रवीन्द्र नाथ टैगोर ने वैश्विक परिदृश्य में 'मृदु शक्ति' के रूप में संस्कृत की अतुलनीय विशिष्टताओं को अनेकशः उद्घाटित किया है।

अपनी एक अत्यधिक प्रमाणित पुस्तक **'The Wonder that was India'** में लेखक ए.एल. बाशम बहुत स्पष्टता के साथ प्रमाणित-सा करते हैं कि भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता बुनियादी तौर पर विश्व हेतु एक बहु-आयामी अतुलनीय उपहार है। प्रेम, सहिष्णुता, परस्पर समझ जैसे तत्त्व अद्यतन विश्व के लिए पूर्व की अपेक्षा अधिक उपयोगी व स्वीकार्य हैं।